P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-6* September- 2018
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

ऐतिहासिक पाण्डुलिपि चित्रण में मुगल शैली का क्रमिक विकास

पूनम रानी
असिस्टेंट प्रोफेसर,
चित्रकला विभाग,
मंगलायतन विश्वविद्यालय,
अलीगढ

सारांश

भारत देश अपने धर्म, संस्कृति एवं परम्परागत उपलब्धियों के कारण विश्व में अपनां श्रेष्ठ स्थान रखता है। भारतीय चित्रकला का इतिहास अति प्राचीन है। समय–समय पर चित्रकला की अनेक शैलियों का जन्म हुआ जिनका भारतीय चित्रकला के इहिास में विशेष महत्वपूर्ण स्थान रहा है। चित्रकला की मध्ययुगीन शैलियों में मुगल शैली को अति विकसित शैली के रूप में जाना जाता है। मुगल चित्र शैली का उद्भव एवं विकास सोलहवीं शताब्दी में सम्राट अकबर (1556–1605) के संरक्षण में हुआ । मुगल चित्रकला का आरम्भ तैमूरिया वंश के साथ ही हो गया था परन्तु अकबर के सिंहासनारोहण के पूर्व तक उसका स्वरूप विदेशी (ईरानी) ही रहा। मुगल कला का जन्म ईरानी तथा भारतीय शैलियों के मिश्रण से हुआ। इस शैली में अकबर से पूर्व की शैली से शाहजहॉ कालीन शैलीगत विशेषताओं में अनेक भिन्नतायें दृष्टिगत होती हैं जिनका अध्ययन मुगल पाण्डुलिपि चित्रों में क्रमबद्ध किया गया है।

आरम्भिक अकबर युग के चित्रों में हम्जा चित्रावली ऐतिहासिक नहीं है तथापि शैली निर्धारण की दृष्टि से इसकी विशेषतायें ध्यान रखनां आवश्यक हैं। हम्जा चित्रावली में अनेक नवीन तत्वों का समावेश हुआ। जिसमें चित्र बडे आकार में भित्ति–चित्रों के बने हैं।इन चित्रों में संगति का आभाव है जो फारसी कला में है। घास, वनस्पति, पर्वत, भवन, जलधारा, यहॉ तक कि मानवाकृति भी ऊपरी हाशिये के द्वारा अवरूद्ध कर दी गई, उनके ऊपर आकाश चित्रित करने का स्थान नहीं है। फारसी कला की अपेक्षा हम्जा चित्र अधिक विविधतापूर्ण वर्ण योजनाओं में हैं। हम्जा चित्रों में आकृतियॉ गतिशील होने के कारण अधिक ओजपूर्ण हैं। पार्श्वगत आकृतियॉ फारसी कला में अंकित नहीं की जाती है।

अकबर कालीन ऐतिहासिक ग्रथों की श्रंखला तारीखे खानदाने तैमूरिया की पाण्डुलिपि (1577 ई0के लग–भग) चित्रण से आरम्भ होती है। इस समय मुगल शैली में अनेक भारतीय तत्वों का समावेश हो चुका था । ईरानी कला की आलंकारिता के अपेक्षाकृत गम्भीरता है और किंचित् छाया–प्रकाश विधि का प्रयोग हुआ हैं। ईसाई (यूरोपीय) तत्वों का मुगल कला में प्रवेश 'दराबनामा'(लग–भग 1585–90 ई0) से माना जाता है, इसके चित्रों में कोमल छाया–प्रकाश का प्रभाव दिखाया जाने लगा था। इसका अगला चरण अकबरनामा में मिलता है। बाबरनामा तथा अकबरनामा की अनेक मुख्य आकृतियों की व्यक्तिगत विशेषतायें सावधानी से चित्रित की गई हैं। अकबर कालीन चित्रों में कई कलाकार मिल कर कार्य करते थे अतः इस शैली का विकास भी शीघ्रता से हुआ। अकबर युग के चित्रों में हम सीधा–सीधा संयोजन नहीं देखते। यह एक वस्तु समूह से दूसरे वस्तु समूह पर घूमता हुआ तिरछा होता है।

लगभग 1600–1660 (जहॉगीर तथा शाहजहॉ काल) की अवधि में मुगल चित्रकार स्वाभाविकता की तकनीक को पूर्ण विकसित करने में लगे रहे। यह समय मुगल शैली का परिपक्व काल माना गया है। नाटकीय विषयों का चयन, मनोवैज्ञानिक स्थितियों के प्रति आग्रह प्रमुख पात्रों के मनो भावों की सूक्ष्म अभिव्यक्ति तथा वेश–भूषा एवं उपकरणों में भी बारीक विवरणों का अंकन जहॉगीरी कला में प्रचुरता से व्यवहारिक हुआ है। शाहजहॉ का युग वैभव, भव्यता और शान–शौकत का युग था। शाहजहॉ–युग के चित्रों में सुवर्ण का प्रयोग भी बहुत हुआ। इस समय अदब–कायदे का जो प्रभाव था उसके कारण आकृतियों की गतिशीलता ही नहीं, स्वाभाविक चेष्ठाएँ भी प्रभावित हुई है। रंग योजनाओं में भी समयानुसार भिन्नतायें द्ष्टिगत होती हैं।

मुख्य शब्द

हम्जा चित्रावली, फारसी कला, बाबरनामा, अकबरनामा, संयोजन, छाया–प्रकाश।

प्रस्तावना

मुगल चित्र शैली का उद्भव एवं विकास सोलहवीं शताब्दी में सम्राट अकबर (1556–1605) के संरक्षण में हुआ । मुगल चित्रकला का आरम्भ तैमूरिया वंश के साथ ही हो गया था परन्तु अकबर के सिंहासनारोहण के पूर्व तक उसका स्वरूप विदेशी (ईरानी) ही रहा। अकबर का शासन काल कला के लिये वरदान – स्वरूप सिद्ध हुआ। मुगल शैली के पूर्व ईरान में जो कला शैली चल रही थी उसे फारसी कला कहा जाता है। जिसे मुगल संरक्षको ने आश्रय देकर विकसित किया था उसकी प्रमुख विशेषतायें इस प्रकार थीं–

फारसी कला में फारसी कविता की प्रेरणां थी। प्रसिद्ध नायक–नायिकाओं के प्रेम तथा शौर्य की गाथायें इनमें प्रमुख थीं। फारसी काव्य में अनेक रूढियां प्रचलित थीं। काव्य की ही भाँति फारसी चित्रकला में भी कुछ रूढियां बन गयी। पर्वत, वृक्ष और बादल आदि को जानबूझ कर इतना अलंकारिक और सुन्दर बनाया जाने लगा कि वे काल्पनिक रूपों में परिवर्तित हो गये। पर्वतीय अथवा चट्टानी भूमि, कलकल बहती नदी, पक्षियों की चहचहाट, पुष्पों की अधिकता, ऊँचा क्षितिज, अलग–अलग स्पष्ट दिखायी देने वाली आकृतियाँ, सरल संयोजन किन्तु अत्यधिक सजावट और बारीक अलंकरण–युक्त विवरण, सुन्दर चटकीले रंगो तथा सुवर्ण का प्रयोग–संक्षेप में इन्ही को फारसी कला की प्रमुख पहचान कहा जा सकता है।[1] इस प्रकार की कला को अब्दुस्समद तथा मीर सैयद अली ने मुगल दरबार में आरम्भ किया था। इसके विषय में कृष्ण चैतन्य ने लिखा है–

"An alien, Safavid idiom grafted on Indian soil underwent a mutation, when nourished by Indigenous traditions to give birth to Mughalpainting, which in later phases was as much Indian as any other school of painting in India".[2]

आरम्भिक मुगल शैली में उनकी पर्याप्त अनुकृति की गई । इसमें परिप्रेक्ष्य का भी कोई महत्व अथवा स्थान नहीं था। सभी उपादान आलंकारिक विधि से चित्रित किये जाते थे। अकबरी शासन के आरम्भिक दो दशको से अधिक समय तक इसका प्रभाव रहा। आरम्भिक अकबर युग के चित्रों में हम्जा चित्रावली ऐतिहासिक नहीं है तथापि शैली निर्धारण की दृष्टि से इसकी विशेषतायें ध्यान रखनां आवश्यक हैं। हम्जा चित्रावली के कलाकारों के दल के प्रमुख उस्ताद अब्दुस्मद तथा मीर सैयद अली थे। ये ईरानी कला के उस्ताद थे। फिर भी हम्जा चित्रावली में अनेक नवीन तत्वों का समावेश हुआ। इसे ईरानी कला से पृथक करने वाले तत्वों में निम्नलिखित प्रमुख हैं[3]–

1. हम्जा के चित्र बडे आकार में भित्ति– चित्रों के समान हैं। यदि इन्हे लघु आकार में बनाया जाये तो इनकी विशेषतायें प्रायः समाप्त हो जाती हैं।
2. इनमें संगति का अभाव है जो फारसी कला में है। घास, वनस्पति, पर्वत, भवन, जलधारा, यहॉ तक कि मानवाकृति भी ऊपरी हाशिये के द्वारा अवरूद्ध कर दी गई, उनके ऊपर आकाश चित्रित करने का स्थान नहीं है। फारसी कला की अपेक्षा हम्जा चित्र अधिक विविधतापूर्ण वर्ण योजनाओं में हैं।
3. हम्जा चित्रों में आकृतियाँ गतिशील होने के कारण अधिक ओजपूर्ण हैं।
4. पार्श्वगत आकृतियाँ फारसी कला में अंकित नहीं की जाती है।

राय कृष्णदास ने इसकी विशेषताओं का उल्लेख इस प्रकार किया है[4]–

ये आलंकारिक न होकर घटना चित्र है। इनमें विरलता नहीं भीड–भाड एवं व्यापकता तथा उदारता है।इनमें संयोजन का एक अपनां प्रकार है। इनकी रेखाओं में गोलाई है और लिखाई में स्थूलता (भार का अनुभव)है। तथा एक चश्म चेहरो की अधिकता है जिनकी आँखे पटोलाक्ष/मीनाक्ष हैं। मानव आकृतियों का आलेखन स्फूर्तिमय है तथा वेश–भूषा हिरात से भिन्न है। विशेष रूप से भारतीय स्त्रियों की आकृतियाँ दृष्टव्य हैं। इनमें जल, स्थल, पहाड, पेड–पौधों, बादल, पशु–पक्षी तथा दानवों का आलेखन अलग है। वृक्षों में केले, वट, पीपल तथा आम और पशु–पक्षियों में हाथी तथा मोर आदि भी हैं। इनमें हाथ–पाँव की मुद्रायें भारतीय ढंग की पायी जाती हैं तथा वस्त्रों में विशेष प्रकार की शिकन और फहरान है। इनमें हाथियों की वह सारी परम्परा मौजूद है जो मोहन–जोदडो काल से चली आ रही है। हम्जा चित्रों का वास्तु सर्वथा भारतीय है। इसमें कुछ देवताओं की छवियाँ अंकित हैं ये पाल शैली की अति निकट परम्परा में है।

इस विश्लेषण से यह परिणाम निकलता है कि यद्यपि इन चित्रपटों में ईरानी शैली की हिरात शाखा का एक खास अंश विद्यमान है, फिर भी इनका मुख्य अंश भारतीय है जो मुख्यतः काश्मीर और अल्पतः राजस्थानी शैली का है। इन चित्रों में पर्वत भी कश्मीर शैली के लाक्षणिक आलेखन हैं, यह मत विन्सेण्ट स्मिथ ने व्यक्त किया है। उनके विचार से ये कश्मीर में बने होने चाहिये।[5]

अकबर कालीन ऐतिहासिक ग्रथों की श्रंखला तारीखे खानदाने तैमूरिया की पाण्डुलिपि (1577 ई0के लग–भग) चित्रण से आरम्भ होती है।[6] अकबर के गुजरात अभियान (1573 ई0) के समय उसके साथ तीन चित्रकार भी थे। इस समय से मुगल शैली में कई सूक्ष्म परिवर्तन हुए। चित्र एक भित्ति पर चिपकाये अथवा लटकाये जाने वाले पट–चित्र की भाँति नहीं रहे। इनमें पीले तथा नीले रंगो की रंगतो में अन्तर है। ईरानी कला की आलंकारिता के बजाय अपेक्षाकृत गम्भीरता है और किंचित् छाया–प्रकाश विधि का प्रयोग हुआ हैं। इनमें एक बिन्दु परिप्रेक्ष्य नहीं है।[7]

अबुल फज्ल ने लिखा है कि दरबारी कलाकारों ने जो उत्तम चित्र बनाये हैं उन्हे यूरोपीय चित्रकारों की

आश्चर्यजनक कृतियों के समकक्ष रखा जा सकता है। अबुल फज्ल जब यह लिख रहा था तब मुगल दरबार यूरोपीय कला से भली–भाँति परिचित हो चुका था।

अध्ययन का उद्देश्य

भारतीय चित्रकला के विकास में मध्ययुगीन चित्रशैलियों का विशेष महत्व रहा है। भारत में मुगलों के साम्राज्य की स्थापनां से चित्रकला की एक नवीन शैली का जन्म हुआ जो भारतीय चित्रकला इतिहास में मुगल शैली के नाम से विख्यात है। मुगल चित्र शैली का उद्भव एवं विकास सोलहवीं शताब्दी में सम्राट अकबर (1556–1605) के संरक्षण में हुआ। अकबर कालीन मुगल शैली में ईरानीं, कश्मीरी तथा राजस्थानीं, तीन प्रधान शैलियों का समन्वय हुआ है। इस शैली में यूरोपीय प्रभाव भी परिलक्षित होते हैं। इस शैली में प्रायः पुस्तक चित्र, चित्रपट एवं चित्रफलक ही अधिकांश में प्राप्त होते हैं।

अकबर ने अपने शासन काल में लग–भग बीस हजार चित्र तथा अनेक पाण्डुलिपियों का चित्रण करवाया। जिनमें तारीखे खानदाने तैमूरिया, बाबरनामा, अकबरनामा, आदि ऐतिहासिक पाण्डुलिपियां है। जहॉगीरनामा तथा पादशाहनामा ,जहॉगीर तथा शाहजहॉ के शासन के समय चित्रित की गई।

उपर्युक्त पाण्डुलिपियों में शैली के विकास का क्रमबद्ध अध्ययन करनां तथा मुगल शैली में अन्य शैलियों की विशेषताओं का विश्लेषण करनां ही इस शोध का उद्देश्य है।

यूरोपीय प्रभाव

अकबर को यथार्थ का धार्मिक भावनाओं से समन्वय देखकर उसे यूरोपीय शैली से बहुत सन्तोष मिलता था, ईश्वरीय सृष्टि तथा उसके जीवों को मानवीय तथा विश्वस्त आकृतियों में देखकर –

"To reproduce as faithfully as humanly possible God's creation and his creatures"[8]

इस प्रसंग में यह भी देखनां उचित है कि मुगल कला को ईसाई तत्वों ने कब प्रभावित करनां आरम्भ किया था? ईसाई (यूरोपीय) तत्वों का मुगल कला में प्रवेश 'दराबनामा'(लग–भग 1585–90 ई0) से माना जाता है, इसके चित्रों में कोमल छाया–प्रकाश का प्रभाव दिखाया जाने लगा था। इसका अगला चरण अकबरनामा में मिलता है जहाँ शहजादों के जन्म सम्बन्धी चित्रों पर 'कुमारी के जन्म' के ईसाई संयोजनों का प्रभाव है तथा यूरोपीय तकनीक की प्रेरणा से गढनशीलता का प्रयोग अधिकाधिक होता गया है। बाबरनामा तथा अकबरनामा की अनेक मुख्य आकृतियों की व्यक्तिगत विशेषतायें सावधानी से चित्रित की गई हैं। इससे पूर्व भी तारीखे अल्फी के चित्रों में प्रत्येक आकृति इतनीं वास्तविकता से बनायी गयी है कि सम्पूर्ण चित्र ही अकबर के दरबार की मानों यथार्थ झाँकी उपस्थित करता है जिनमें यूरोपियन भी हैं (चित्र सं0–1)। इस सबके पीछे इसाई कला में अकबर की रूचि ही कार्य कर रही थी।

मुगल कला का स्वरूप निर्धारित करने में एक ओर हिन्दु कलाकारों ने निर्णायक भूमिका निभाई। चूँकि अकबर कालीन चित्रों में कई कलाकार मिल कर कार्य करते थे अतः इस शैली का विकास भी शीघ्रता से हुआ। मुगल कला में नाटकीयता का तत्व भारतीय परम्परा से आया था। इसके कारण फारसी आलंकारिकता तथा वर्ण–विधान ने एक नया रूप प्राप्त किया और किचित् यथार्थता का समावेश हुआ, उदाहरणार्थ ''बाबर का घोडे पर से गिरनां'' में गति तथा नाटकीयता का जो स्वरूप है, वैसा ईरानीं कला में मिलनां असम्भव है।(चित्र सं0–2)

संयोजन

अकबर युग के चित्रों में हम सीधा–सीधा संयोजन नहीं देखते। यह एक वस्तु समूह से दूसरे वस्तु समूह पर घूमता हुआ तिरछा होता है।इसके उदाहरण बाबरनामा में देखे जा सकते हैं,परन्तु इसमें आकृतियां निकटता अथवा दूरी के अनुसार बडी–छोटी नहीं है। भवनों के संयोजन में भी सीधा–सीधा दृश्य नहीं है। आकृति समूह अलग–अलग होते हुये भी पूरी तरह असम्बद्ध नहीं हैं(चित्र सं0–3)।[9]

घनत्व तथा पुंज के प्रभाव मुगल कला में अजन्ता के समान हैं विशेष रूप से पृष्ठभूमि में गहरे रंगो के बल लगाकर मुखाकृति को उभारा गया है। लूबर हाजेक का कथन है कि आश्चर्य है कि लग–भग एक हजार वर्ष के अन्तराल के पश्चात् मुगल चित्रकारों ने अजन्ता के समान ही इस तकनीकी को कैसे अपनाया?

अजन्ता का यह प्रभाव मुगल कला में पाल शैली की परम्परा के कलाकारों द्वारा ही हुआ होगा जो नेपाल तथा ग्वालियर में इस समय था। इन्होने ही नेत्र की आकृति में परिवर्तन किया।[10]

अपने शासक की प्रशंसा में जिस प्रकार कवि, चारण तथा लेखक पीछे नहीं रहते थे, उसी प्रकार चित्रकार भी पीछे नहीं रहे।अबुल फज्ल ने आइने–अकबरी में अकबर की आलोचनां का एक शब्द भी नहीं लिखा है और उसके गुणों को आसमान से ऊचा बताया है। इस से स्पष्ट होता है कि अकबर के समय जिन ऐतिहासिक पाण्डुलिपियों का चित्रण किया गया उनमें अंकित विवरणों से वास्तविकता भिन्न थी।[11]

अकबर युग की कला में यथार्थ व्यक्ति–चित्रण, शरीर–शास्त्र सम्बन्धी विशेषताएँ तथा स्वभाव–चित्रण की ओर झुकाव यूरोपीय कला के कारण हुआ था। भारतीय कला अथवा ईरानी कला में ये विशेषताएँ नहीं थीं।[12]

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मुगल शैली का स्वरूप अकबर के समय ही निर्धारित हुआ था। यद्यपि उसकी चित्रशाला के प्रमुख शिक्षक ईरानी थे, तथापि जो कला विकसित हुई उसमें राजपूत, दक्खिनी तथा सफवी ईरानी तत्वों का समन्वय हुआ। सभी तत्वों का समान योगदान रहा।ईरानी कला की अभिरूचि तथा झुकाव, भारतीय कला के चटकीले विविध रंग, ओजमयता, अति परिष्कार से रहित तकनीक तथा उत्तेजक एवं तुरन्त प्रभाव डालने वाले संयोजनों का ईरानी कला के परिष्कृत तकनीक, मणियों के समान दमकती रंग–योजनाओँ और सूक्ष्म प्रयत्नों से भावभिव्यक्ति का समन्वय हुआ।

परन्तु जैसे–जैसे अकबर की आयु बढ़ती गयी, कला में भी प्रौढ़ता आती गयी।संयोजनों, शिल्प–विधान तथा भावभिव्यक्ति में परिष्कृति आती गयी।

अकबर शैली के समकालीन घटना–चित्रों में शैली का ओज देखते ही बनता है। इनमें वैभव तथा स्पन्दन बहुत अधिक है तथा हिंसक ऊर्जा को प्रस्तुत करने में इन चित्रकारों ने यथार्थवादी विवरणों को एक विशिष्ट शैली में संयोजित किया है।है। अकबर कालीन ऐतिहासिक पाण्डुलिपियों के चित्रों में विषय के अनुसार संयोजनों में जो विशिष्टताएँ हैं उनकी पृष्ठभूमि में प्रासंगिकता के अनुसार कुछ परिवर्तन भी किये गये है। सामान्यतः मुख्य आकृति के आसपास कुछ अन्य महत्वपूर्ण आकृतियाँ अंकित की हैं तथा घटना के अनुरूप स्थान संयोजन किया है जिसके प्रमुख उपादान है पशु, पहाड़ियाँ, वृक्ष, दरबार, भवन, जंगल, दूर का दृश्य, सामान्य लोग, सैनिक, दुर्ग, अन्य भवन, नदी अथवा उद्यान आदि।मुख्य आकृति को केन्द्र में स्थान दिया गया है तथा अन्य आकृतियों को महत्व के अनुसार उसके निकट अथवा दूर दिखाया गया है।संयोजन वर्तुल, कर्णवत् अथवा ऊर्ध्व हैं। अधिक से अधिक आकृतियाँ तथा वस्तुएँ संयोजित करने की दृष्टि से एकदम सीधी व्यवस्था न करके किंचित लहरदार विधि का प्रयोग किया गया है।

उत्सव, आखेट, युद्ध तथा शोक के दृश्यो के वातावरण, वेश–भूषा तथा घटना–विधान के अतिरिक्त मुखाकृतियों के भावों तथा शारीरिक मुद्राओं का भी प्रभावशाली अंकन हुआ है। तैमूरनामा, बाबरनामा तथा अकबरनामा सभी में इनके उदाहरण मिलते हैं। चित्र संयोजनों की पृष्ठभूमि में यूरोपीय प्रभाव से दूर छोटे आकारों में कहीं–कहीं रिनेसाँकालीन भवन तथा अन्य आवासीय बस्ती आदि भी चित्रित हैं।चित्रों को ऊपर से नीचे तक कई भागों में (कई तलों एवं दृश्यों में) विभाजित किया गया है।

किसी चित्र के विषय अथवा घटना से सम्बन्धित विवरण चित्र के हाशिये के अतिरिक्त चित्र–तल में भी लम्बे आयत अथवा पट्टियाँ बना कर अंकित किये गये हैं। तारीखे अल्फी में यह प्रवृति विशेष है। तारीखे खानदाने तैमूरिया के चित्रों से इस प्रवृत्ति में कमी आना आरम्भ हुआ।बाबरनामा के चित्रकारों ने इसका संयत ढंग से प्रयोग किया है। अकबरनामा के चित्रों में भी यह चलती रही है यहाँ तक कि कहीं–कहीं तो यह मुख्य आकृति के चेहरे के समीप तक पहुँच गयी है जैसा कि हम आधम खाँ को मृत्युदण्ड विषयक चित्र में देखते हैं।अकबर युग के चित्रों में प्रत्येक उपादान में स्वाभावकिता लाने का प्रयत्न किया गया तथापि मानवाकृतियों, विशेषतः व्यक्ति चित्रण में यह सबसे अधिक है। इसके पीछे यूरोपीय कला की प्रेरणा थी। अकबर–काल में इसका आरम्भ हुआ और यह जहाँगीर तथा शाहजहाँ के समय इसका पर्याप्त विकास हुआ। 1580 से इसका विशेष आरम्भ माना जाता है।अकबर के समय भारतीय तथा विदेशी शैलियों का समन्वय हुआ।

चित्रकला के प्रति अकबर की दृष्टि जहाँ व्यावहारिक थी वहाँ जहाँगीर की दृष्टि संरक्षक की थी।जहॉगीर ने अपने राज्यकला में उसने जिन पाण्डुलिपियों को चित्रित कराया उनमें जहाँगीरनामा (तुजुक–ए–जहाँगीरी) प्रमुख हैं जिसमें उसके राज्यकाल के आरम्भिक सात वर्ष (1605–1612 ई०) की कला का प्रदर्शन है।

जहाँगीरी शैली की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

एक ही चित्र में कई चित्रकार कार्यकर सकते थे। स्वयं जहाँगीर ने यह लिखा है कि वह किसी चित्र में अलग–अलग चित्रकारों का कार्य भली भाँति पहचान सकता था। इससे स्पष्ट है कि यह पद्धति उस समय थोड़ी–बहुत चलती रही थी। जहाँगीर स्वंय चित्रकारों पर कड़ी निगरानी रखता था। उसने अपने श्रेष्ठ चित्रकारों को 'नादिर–उज–जमा' तथा 'नादिर उल अस्र' की उपाधिया भी दी थी। व्यक्ति–चित्रण की बारीकियों तथा समकालीन जीवन में अधिक रूचि के कारण जो परिवर्तन आये उनसे ऐतिहासिक ग्रन्थों का चित्रण बन्द हो गया। इनके स्थान पर मुरक्कों की रचना होने लगी। इनमें ऐसे विषयों के चित्र लगाये जाते थे जो बादशाह को प्रिय थे। व्यक्ति–चित्रों, पशु–पक्षी तथा पुष्प चित्रों के अतिरिक्त ऐतिहासिक महत्व के जो चित्र बने थे वे तुजुक–ए–जहाँगीरी में लगाये गये।[13]

तकनीकी दृष्टि से जहाँगीरी कला में दरबारी दृश्यों में शाही शान–शौकत तथा अदब–कायदे का पूर्ण प्रदर्शन है।श्वेत संगमरमर का वास्तु, मूल्यवान पत्थरों का जड़ाव, बारीक मलमल के पारदर्शी वस्त्र, जिनमें सुनहरी कारीगरी हो रही है और पुष्पों तथा अन्य अभिप्रायों के अलंकारण है–इन सबने चित्रकारों की वर्ण–योजनाओं को भी प्रभावित किया।जहाँगीर को अपने व्यक्तिचित्र बनवाने का बड़ा शौक था और दरबार में वह जिनका सम्मान करता था उन्हें अपना व्यक्ति, चित्र भेंट करता था। उसने एक बहुत छोटे आकार के व्यक्ति चित्र, परम्परा भी आरम्भ की थी जिसे गले में लटकाया जाता था।

लगभग 1600–1660 (जहाँगीर तथा शाहजहाँ काल) की अवधि में मुगल चित्रकार स्वाभाविकता (naturalism) की तकनीक को पूर्ण विकसित करने में लगे रहे। यह समय मुगल शैली का परिपक्व काल माना गया है। इससे पहले का समय इसके विकास में तथा बाद का समय इसे पुनरूज्जीवित करने में लगा रहा।[14]

जहाँगीरी कला मे दिखावा अधिक है। वह दयालू तथा क्रूर दोनों प्रकार के स्वभाव का व्यक्ति था परन्तु उसकी क्रूरता का चित्रण नहीं किया गया है।जहाँगीरनामा के लिये जो चित्र बनावाये गये थे उनमें से निश्चय ही अनेक अन्य मुरक्कों में चले गये हैं। इनमें दो महत्वपूर्ण हैंकृमुरक्का–ए– गुलशन तथा बर्लिन संग्रह वाला मुरक्का।चित्र चाहे मनोरंजन से सम्बन्धित हो, आखेट, यात्रा के हों, प्रत्येक विषय के चित्रों में उपस्थित व्यक्तियों की आकृतियों शबीहों के समान पूरी सच्चाई से बनायी गयी है। विलकिन्सन भी इसी दृष्टिकोण से सहमत है कि यहीं वह क्षेत्र सबसे महत्व का था जिसमें यथार्थ का प्रस्तुतीकरण पश्चिमी पद्धतियों से किया गया था।नाटकीय विषयों का चयन, मनोवैज्ञानिक स्थितियों के प्रति आग्रह प्रमुख पात्रोंके मनो भावों की सूक्ष्म अभिव्यक्ति तथा वेश–भूषा एवं उपकरणों में भी बारीक विवरणों का अंकन जहाँगीरी कला में प्रचुरता से व्यवद्धत हुआ है। फिर भी चित्रों के समस्त स्वरूप पर दरबारी अदव–कायदे का

प्रभाव सर्वोपरि है।जहाँगीर के समय की चित्रकला गम्भीर, लाघवयुक्त तथा कठोर रूप से संयमित है, फिर भी बहुत समृद्ध है। इसकी शैली में दिखावा तथा आकर्षण है।

शाहजहाँ का युग वैभव, भव्यता और शान–शौकत का युग था।मुरक्कों में वही चित्र लगाये गये जो सम्राट की प्रतिष्ठा के अनुरूप थे। शाहजहाँ–युग के चित्रों में सुवर्ण का प्रयोग भी बहुत हुआ।शाहजहाँ के आरम्भिक युग में कला इस प्रकार चली मानों संरक्षक के स्वभाव में कोई अन्तर ही न आया हो। बिचित्तर तथा गोवर्धन ने इस युग में भी अनेक उत्तम चित्र अंकित किये।शाहजहाँनामा (पादशाहनामा) की बंधी हुई जिल्द विण्डसर पैलेस में है किन्तु इसके अनेक पृष्ठ अन्य संग्रहों के चित्रों से उत्तम कोटि के हैं। शाहजहाँकालीन चित्रों में अधिक भीड़ भरे संयोजन भी किये गये। दरबारी दृश्यों में तो आकृतियों को पूरी तरह अदब–कायदे के अनुसार पंक्तिबद्ध दिखाया गया है, युद्ध आदि के दृश्यों में भी इनका एक अलग प्रकार से ही चित्रण हुआ है। इस समय अदब–कायदे का जो प्रभाव था उसके कारण आकृतियों की गतिशीलता ही नहीं, स्वाभाविक चेष्ठाएँ भी प्रभावित हुई है। शहजादा खुर्रम द्वारा पिता जहाँगीर के साथ सिंह आखेट के चित्र में इस बहुत सटीक रूप में अनुभव किया जा सकता है।जहाँगीर के पूर्व, अकबर युग की कला में संयोजनों में एक सजीवता का आभास होता है। जहाँगीर–युग में दरबारी अदब कायदे का प्रभाव अधिक हो जाने से इसमें कमी आने लगी। शाहजहाँ के युग में इसमें और भी कमी आयी। विषय कोई भी हो और स्थान कहीं भी हो, सभी–आकृतियाँ अदब के अनुसार नियमों में बंधी केवल उतनी ही क्रियाशीलता में दर्शायी गयी है जितनी उन्हें स्वतन्त्रता थी।

मुगलकला में परम्परा का विकास भी है। इसके विकास के कई कारण थे– एक जो जहाँगीर के समान संरक्षक मौलिक तथा विविध विषयों का अंकन चाहते थे। और उत्तमता के लिये यूरोपीय कला को कसौटी मानते थे। इसके कारण चित्रकार निरन्तर प्रयोगों में लगे रहते थे तथा अपने संरक्षक की स्वीकृति प्राप्त करने के लिये प्रत्येक नये चित्र में पहले बने चित्र से आगे निकलने का प्रयत्न करते थे। दूसरा कारण राजनीतिज्ञ परिस्थिति थी जिसमें इस चित्रकारों की स्थिति अपेक्षाकृत अधिक सुरक्षित थी, किन्तु शाहजहाँ के पश्चात यह बदल गयी।

मुगल चित्रकारों की शैली में विषयानुरुप भिन्नता भी मिलती है। ऐतिहासिक घटनाओं के चित्रण में घटना पर विशेष बल दिया गया है। दृश्य–संयोजनों में कुछ काल्पनिक उपादान जैसे वृक्ष, भवन पर्वत अथवा पशु–पक्षी भी अंकित हैं। इनमें भवनों आदि की ऐतिहासिक प्रामणिक नहीं हैं। सभी महत्वपूर्ण अथवा प्रमुख–प्रमुख आकृतियों को बारीकी तथा सावधानी से अंकित किया गया है।

वेश–भूणा, अस्त्र–शस्त्र तथा वाहन एवं रीति–रिवाज आदि सभीतत्कालीन परिस्थितियों के अनुसार चित्रित किये गये हैं। जिस युग में चित्र अंकित किये गये थे उनके अनुसार भी कुछ विवरण यथातथ्य नहीं है।

चित्र सं0– 1

चित्र सं0– 2

चित्र सं0– 3

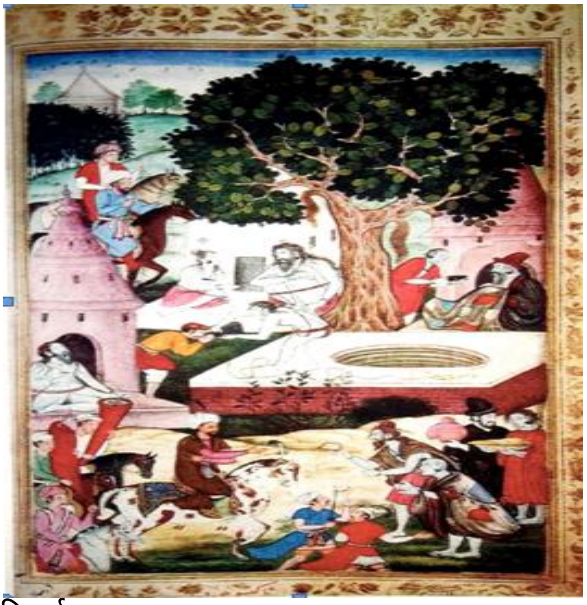

निष्कर्ष

मुगल चित्रकला के शैलीगत अध्ययन से ज्ञात होता है कि यह शैली चित्रकारों की एक स्वतन्त्र शैली के रूप में न होकर शासकों की इच्छा के अधीन विकसित हुई। मुगल पाण्डुलिपियों में अकबर के समय भारतीय तथा विदेशी शैलियों का समन्वय हुआ। शाहजहॉ कालीन चित्रों तक आते–आते यह शैली यूरोपीय तत्वों से अत्यधिक प्रभावित रही। तारीखे खानदाने तैमूरिया से पादशाहानामा की पाण्डुलिपियों में, चित्रकला के प्रति शासकों की रूचि, उनकी वेश–भूषा, कला के प्रति उनकी उदारता आदि की झलक देखने को मिलती है परन्तु इन चित्रों से राजनैतिक क्रिया–कलापों तथा राजनैतिक घटनाओं की समकालीन पृष्ठभूमि का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। अपने शासक की प्रशंसा में जिस प्रकार कवि, चारण तथा लेखक पीछे नहीं रहते थे, उसी प्रकार चित्रकार भी पीछे नहीं रहे। अबुल फज्ल ने आइने– अकबरी में अकबर की आलोचनां का एक शब्द भी नहीं लिखा है और उसके गुणों को आसमान से ऊचा बताया है। इस से स्पष्ट होता है कि अकबर के समय जिन ऐतिहासिक पाण्डुलिपियों का चित्रण किया गया उनमें अंकित विवरणों से वास्तविकता भिन्न थी।

यह शैली चित्रकला इतिहास में एक समृद्ध शैली के रूप में सर्वमान्य है। ईरानी कला की अभिरूचि तथा झुकाव, भारतीय कला के चटकीले विविध रंग, ओजमयता, अति परिष्कार से रहित तकनीक तथा उत्तेजक एवं तुरन्त प्रभाव डालने वाले संयोजनों का समन्वय हुआ। मुगल शैली का स्वरूप अकबर के समय ही निर्धारित हुआ था। यद्यपि उसकी चित्रशाला के प्रमुख शिक्षक ईरानी थे, तथापि जो कला विकसित हुई उसमें राजपूत, दक्खिनी तथा सफवी ईरानी तत्वों का समन्वय हुआ।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *चैतन्य कृष्ण, ए हिस्ट्री ऑफ इन्डियन पेंटिग, दिल्ली 1979,वाल्यूम–2,पृ0सं0–52–53*
2. *चैतन्य कृष्ण, ए हिस्ट्री ऑफ इन्डियन पेंटिग, दिल्ली 1979,वाल्यूम–2,पृ0सं0– 52*
3. *ऐमी वेलेज, अकबर्स रिलीजस थॉट्स रिफलेक्टेड इन मुगल पेंटिग लन्दन, 1952, पृ0सं0–37*
4. *रायकृष्ण दास, भारत की चित्रकला, लीडर प्रेस इलाहबाद पृ0 73–75*
5. *रायकृष्ण दास, भारत की चित्रकला, लीडर प्रेस इलाहबाद पृ0– 78*
6. *पूर्वोक्त, ऐमी वेलेज, पृ0सं0–38*
7. *पूर्वोक्त चैतन्य कृष्ण, पृ0सं0–54*
8. *वही पृ0– 29*
9. *पूर्वोक्त चैतन्य कृष्ण, पृ0सं0–54–55*
10. *पूर्वोक्त चैतन्य कृष्ण, पृ0सं0–58–59*
11. *पूर्वोक्त, ऐमी वेलेज, पृ0सं0–11*
12. *मइलो क्लीवलेंड बीच, द ग्रान्ड मुगल : इम्पिरियल पेंटिग इन इन्डिया 1600–1660,फ्रांस 1978 पृ0सं0–16*
13. *टोब्ली फाल्क एण्ड मिलड्रेड आर्चर, इंडियन मिनिएचर्स इन द इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी, लन्दन 1981 पृ0सं0–57*
14. *पूर्वोक्त, मइलो क्लीवलेंड बीच, पृ0सं0–22*